## म्युनिक का LMU विश्वविद्यालय

# जहां पढ़ाई जा रही हैं भारतीय भाषाएं

जर्मन लोगों में भारतीय संस्कृति को लेकर बेहद रुचि है। वे भारतीय संस्कृति और भाषाओं को निकटता से जानना चाहते हैं। पिछले कुछ वर्षों में बॉलीवुड फ़िल्मों की बढ़ती लोकप्रियता ने भी इस जिज्ञासा को और बढ़ाया है। उनकी ज़रूरत पूरी करता है एशियन अध्ययन विभाग (http://www.indologie.lmu.de/) यहाँ जापानी, चीन, एवं तिब्बती विद्या के साथ-साथ भारतीय संस्कृति और भाषाओं के बारे में भी पढ़ाया जाता है। छह वर्ष के इस स्नातकोत्तर कला विशारद कोर्स (M.A.) में करीब 50 छात्र पढ़ रहे हैं। विभाग के विशाल पुस्तकालय में संस्कृत और अन्य द्रविड़ भाषाओं में सैंकड़ों ग्रंथ और हज़ारों पुस्तकें उपलब्ध हैं। ऐसी पुस्तकें भारत में भी आसानी से नहीं मिलेंगी। इस विभाग के सभी शिक्षक ऐसे हैं जो एक बार भारत गए तो भारत में अधिक से अधिक जानने की उनकी इच्छा और तीव्र हो गई। भारत उनके दिलों में है। उनके लिए भारत अभी भी एक छुपी हुई सभ्यता है जिसके बारे में दुनिया अभी पर्याप्त नहीं जानती।

चित्र में बाईं ओर से PD Dr. phil. habil. Monika Zin (कला संग्राहक), Eva-Maria Glasbrenner M.A.(संस्कृत अध्यापिका), PD Dr. phil. habil. Dagmar Hellmann-Rajanayagam (तमिल अध्यापिका), Prof. Dr. Robert Zydenbos (आधुनिक इंडोलोजी के प्रोफेसर, कन्नड़ भाषा एवं जैन धर्म के विशेषज्ञ)

बहुत से जर्मन लोग भारतीय भाषाओं को सीखने की रुचि दिखाते हैं और कोर्स में प्रवेश लेते हैं। भारतीय परिवारों से भी कई छात्र प्रवेश लेते हैं जो स्वयं अपनी ही संस्कृति के बारे में जानना चाहते हैं। यहाँ भारतीय परिवारों से कितने ही लोग हैं जो तमिल आदि बोल लेते हैं लेकिन लिख नहीं सकते। लेकिन अधिकतर छात्रों को जल्द ही ये भाषाएं बोझिल लगने लगती हैं और वे कोर्स बीच में ही छोड़ कर चले जाते हैं। इसका कारण है प्रशिक्षित अध्यापकों एवं स्तरीय पाठ्य सामग्री का अभाव। हिन्दी एवं संस्कृत के लिए अच्छी एवं पर्याप्त पुस्तकें उपलब्ध हैं परंतु तमिल, कन्नड़, तेलगू आदि में बहुत कम पुस्तकें उपलब्ध हैं, वो भी बहुत पुरानी जो आज के संदर्भ में उपयुक्त नहीं हैं। इसके अतिरिक्त ये पुस्तकें अंग्रेज़ी में लिखी गई हैं जो जर्मन छात्रों के लिए भारी पड़ती हैं। शिक्षकों को पाठ्य सामग्री भी स्वयं ही तैयार करनी पड़ती है। पर्याप्त छात्रों के अभाव के कारण ये विभाग विश्वविद्यालय के लिए लाभप्रद नहीं है और वह इस विभाग को बंद करके किसी तकनीकी क्षेत्र में पैसा लगाना चाहता है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी कई शिक्षकों को पर्याप्त वेतन नहीं मिलता, वे केवल शौक के लिए अपना कीमती समय निकाल कर तमिल, संस्कृत आदि पढ़ाते हैं।

**जो एक बार भारत गए तो भारत में अधिक से अधिक जानने की उनकी इच्छा और तीव्र हो गई। भारत उनके दिलों में है। उनके लिए भारत अभी भी एक छुपी हुई सभ्यता है जिसके बारे में दुनिया अभी पर्याप्त नहीं जानती।**

संस्कृत शिक्षिका Eva Glasbrenner बताती हैं कि उन्हें कम वेतन के बावजूद इतना काम करना पड़ता है कि पुस्तकें तक स्वयं तैयार करनी पड़ती हैं। अधिकतर प्रकाशक उनकी पुस्तकों को प्रकाशित करने में रुचि नहीं लेते क्योंकि वे अधिक बिक्री नहीं कर पातीं। वे पैसा देने की बजाए उनसे पुस्तक छापने का पैसा लेते हैं। वैसे भी उनके पास भारतीय भाषाओं के विशेष अक्षरों को छापने का प्रावधान नहीं होता। इसलिए उन्हें पुस्तक की लेआउट भी स्वयं ही तैयार करनी पड़ती थी। वे भारतीय लेखिका 'शोभा डे' की पुस्तक 'Sultry Days' का उदाहरण देकर कहती हैं कि जर्मनी में कई अस्तरीय भारतीय लेखकों के छिछले साहित्य का घटिया अनुवाद करके भारतीय साहित्य के नाम पर धड़ल्ले से बेचा जाता है और अच्छी कमाई की जाती है। शोभा डे की अंग्रेज़ी भी भारतीय अंग्रेज़ी है, अमरीकन या ब्रिटिश अंग्रेज़ी नहीं। जर्मन अनुवादक, जो भारतीय संस्कृति और भारतीय अंग्रेज़ी से अनजान होते हैं, उन्हें अनुवाद का काम सौंप दिया जाता है। परिणाम ये निकलता है कि इन पुस्तकों में बहुत सी गलतियां रह जाती हैं, वे पठनीय नहीं रहतीं और भारतीय संस्कृति के बारे में बहुत सी भ्रांतियां छोड़ जाती हैं। जो लोग जोश में ये पुस्तकें खरीद लेते हैं, बाद में सोचते हैं कि भारत में स्तरीय साहित्य नहीं लिखा जाता। इन सब बातों से क्षुब्ध होकर अतः उन्होंने स्वयं अपना प्रकाशन आरम्भ करने का निर्णय ले लिया- मान्य प्रकाशन(http://www.manyaver-lag.de/) Eva Glasbrenner अपने प्रकाशन के बारे में कहती हैं- हमने अपनी पहली पुस्तक